भविष्य

डोसियर संख्या 100

ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान

मई 2026

इस दस्तावेज़ में जो कलाकृतियाँ हैं, वे कासा दे लास अमेरिकास के ‘आर्ते दे न्वेस्त्रा अमेरिका आयदेए सांतामारिया’ (आयदेए सांतामारिया हमारे अमेरिका की कला) संग्रह से ली गई हैं। सन् 1959 में क्यूबा की क्रांति के बाद जब कासा दे लास अमेरिकास की स्थापना हुई, तब से यह संस्था साम्राज्यवाद-विरोधी सांस्कृतिक अंतरराष्ट्रीयता का एक प्रमुख मंच बनी रही है, और इसने नामी कलाकारों, लेखकों, बुद्धिजीवियों तथा राजनीतिक कार्यकर्ताओं से गहरे संबंध बनाए हैं। कासा की दीर्घाओं में मुख्यतः लातिन अमेरिकी और कैरिबियाई कलाकारों की पीढ़ी-दर-पीढ़ी की रचनाओं की प्रदर्शनियाँ लगती रही हैं — अनेक विधाओं, विषयों और तकनीकों में। इनमें से कई कलाकृतियाँ पहले कासा की दीर्घाओं में प्रदर्शित हुईं, कुछ ने इसकी प्रतियोगिताओं में पुरस्कार जीते, और कुछ स्वयं कलाकारों ने भेंट में दीं। ये सब अब इस संग्रह का हिस्सा बन चुकी हैं, और मिलकर एक असाधारण कलात्मक विरासत रचती हैं।

tricontinental casa de las américas

कवर

कवर: जूलियो ले पार्क (अर्जेंटीना), मॉडुलेशन Modulation 455, 1981, कैनवास पर ऐक्रेलिक, 200 × 200 से.मी.

भविष्य

डोसियर संख्या 100 | ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान
मई 2026

होसे वेंचुरेली (चिली), सेरिग्राफ़ (प्रिंट), 1970, संस्करण 15/90, आकार: 260 x 430 मि.मी.

पिछले सौ महीनों से हर महीने ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान की टीम ने किसी महत्त्वपूर्ण विषय का गहराई से अध्ययन करके एक डोसियर आपके सामने प्रस्तुत किया है। ये डोसियर साम्राज्यवाद के इतिहास और राष्ट्रीय मुक्ति से लेकर आर्थिक नीति, संप्रभुता, युद्ध और बदलती हुई वैश्विक व्यवस्था के विश्लेषण से जुड़े हुए रहे हैं और दुनिया की अनेक भाषाओं में छपे, जिनमें अंग्रेज़ी, हिंदी और पुर्तगाली से लेकर अरबी, थाई और स्पैनिश तक शामिल हैं।[1] यह हमारा सौवाँ डोसियर है, इसलिए हमने अपने संस्थान की एक प्रमुख अवधारणा—'भविष्य'—का ऐतिहासिक-भौतिकवादी विवेचन प्रस्तुत करने का निर्णय लिया।

जब 2015 में हमारे संस्थान की नींव पड़ी तो हमारे सामने शोध के लिए तीन प्रमुख विषय थे:

1. समकालीन पूँजीवाद और इसे आकार देने वाले वर्ग संघर्ष को और बेहतर रूप से समझना।
2. हमने जिसे ख़ास क़िस्म के चरम दक्षिणपंथ का नाम दिया है उसे और अच्छी तरह समझना।[2]
3. भविष्य – या आने वाले दौर को बेहतर तरह से समझना।

यह तीसरा विषय ऐतिहासिक प्रक्रिया की भौतिकतावादी समझ से निकला है जो वर्तमान को शाश्वत यथार्थ नहीं मानता बल्कि उसमें परिवर्तन की संभावना देखता है। दूसरे शब्दों में, वर्तमान को एक नए भविष्य में बदला जा सकता है। हम जिस पूँजीवादी व्यवस्था में रहते हैं वह शाश्वत नहीं: इसे वर्ग संघर्ष और उत्पादक शक्तियों के विकास के ज़रिए एक समाजवादी व्यवस्था में बदला जा सकता है।

यहाँ, हम पहली बार भविष्य का एक दार्शनिक और राजनीतिक आकलन पेश कर रहे हैं। राष्ट्र मुक्ति पर आधारित मार्क्सवाद से प्रेरणा लेते हुए हमारा मत है कि इस भविष्य को सिर्फ़, लक्ष्य के आधार पर, समाजवाद ही नहीं कहा जाना चाहिए, बल्कि ऐसे भविष्य की संवेदना के आधार पर, उम्मीद भी कहा जाना चाहिए।[3]

हमें पूरा भरोसा है कि आप इस डोसियर को पिछले निन्यानवे डोसियरों की ही तरह पढ़ेंगे और इसे दूसरों के साथ साझा करेंगे, रीडिंग सर्कलों तथा राजनीतिक अध्ययन की दूसरी जगहों पर इस पर बातचीत और बहस करेंगे। आपके सुझावों का हमेशा स्वागत है।

**

दुनिया की हर भाषा में 'भविष्य' के लिए एक शब्द है, आने वाले कल के लिए। उदाहरण के लिए, दुनिया की कुछ सबसे ज़्यादा बोली जाने वाली भाषाओं में इसके लिए निम्नलिखित शब्द हैं:

अंग्रेज़ी: फ़्यूचर (future), वह वक़्त जो अभी आया नहीं है।

मैंडरिन चाइनीज़: वेलाय (未来), जो अब तक आया नहीं।

हिंदी: भविष्य, जो होने वाला है।

स्पैनिश: फूटूरो (futuro), आने वाला वक़्त।

फ़्रेंच: ऐवेनीर (avenir), जो आने वाला है।

अरबी: मुस्तक़बिल (مستقبل), जिससे सामना होने वाला है।

बंगाली: भोबिश्योत (ভবিষ্যৎ), जो होने वाला है।

पुर्तगाली: फूटूरो (futuro), आने वाला समय।

रूसी: बुदुश्ची (будущее), जो होने वाला है।

उर्दू: मुस्तक़बिल (مستقبل), जिससे सामना होने वाला हो।

ये तमाम शब्द एक ही अर्थ पेश नहीं करते; परिवर्तन के प्रति इनका सांस्कृतिक दृष्टिकोण अलग-अलग हैं। इनमें से कुछ खाली कैलेंडर के बारे में हैं, यह विचार कि कल भी है, जैसे आज है, जबकि अन्य उन मुलाकातों के बारे में हैं जो घटित होंगी और जिनका सामना करना होगा। यह ज़रूरी है कि आप जब इस तरह का एक दस्तावेज़ पढ़ रहे हैं – जो एक भाषा में लिखा गया और कई भाषाओं में जिसका अनुवाद हुआ है – तो इसमें भी 'भविष्य' शब्द अपने में अनेक ऐसे अर्थ समाहित किए हुए है जो एक

भाषा से दूसरी भाषा के सफ़र में कुछ-कुछ पीछे छूट जाते हैं। हालाँकि ये शब्द अलग-अलग तरह से आने वाले वक़्त को दर्शाते हैं, लेकिन फिर भी पूँजीवादी सभ्यता में बोली जाने वाली हर भाषा में हम एक सवाल ज़रूर कर सकते हैं: क्या भविष्य सच में है या फिर हम उस सतत वर्तमान में ही रह रहे हैं जैसा कि पूँजीवादी यथार्थवाद हमें बताता है?[4] क्या सच में ऐसा कोई आने वाला कल है जो आज से अलग हो सकता है?

हम जलवायु संकट और जलवायु नस्लभेद, निरंतर चल रहे युद्ध और अंतहीन जनसंहार, वित्तीय पूँजी की तानाशाही तथा सरकारी ख़र्च में कटौती को आम बात बना देने के इस दौर को जब समझने की कोशिश कर रहे हैं तो हमारे आंदोलनों के लिए ऊपर पूछे गए सवाल अहम हो जाते हैं।[5] हमारी चेतना को दशकों से पूँजीवादी यथार्थवाद ने कोहरे से ढाँप रखा है जिसकी वजह से हम वैश्विक बर्बादी से आगे किसी और चीज़ की कल्पना ही नहीं कर पाए।

क्या कोई भविष्य है? बेशक, एक भविष्य है। हम उसके निर्माण के लिए संघर्ष कर रहे हैं, और हम अब भी उसका निर्माण कर रहे हैं।

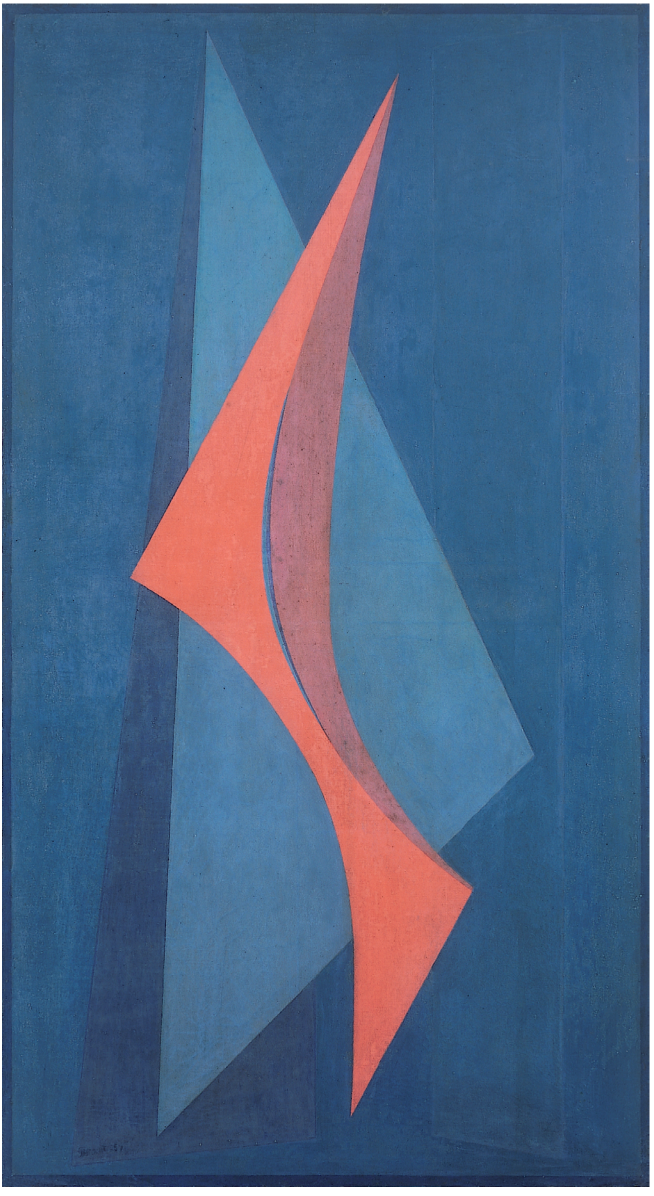

एमिलियो पेट्टोरुटी (अर्जेंटीना), पाजारो रोहो (लाल पक्षी), 1959,
कैनवास पर तेलचित्र, 116 x 63 से.मी.

भाग 1: विघटन

सत्ता की भाषा में भविष्य को वर्तमान का सीधा और सामान्य आगे बढ़ना माना जाता है। इसे कैलेंडर, विकास के आंकड़ों और अनुमान से समझाया जाता है। इस सोच में भविष्य के लिए लड़ना नहीं पड़ता, बस उसका इंतज़ार करना होता है। वह अपने आप आ जाता है, जैसे बही-खाते का अगला पन्ना। भविष्य की यह सोच काफी रूढ़िवादी है। यह मान लेती है कि वर्तमान को परिभाषित करने वाली शोषण, श्रेणीबद्धता और प्रभुत्व की संरचनाओं को पलटने के बजाय उन्हें संशोधित कर लिया जाएगा। भविष्य का ऐसा दृष्टिकोण पूँजीवादी समाज के सभी प्रमुख संस्थानों — जैसे मीडिया, स्कूल, विश्वविद्यालय, थिंक-टैंक और चैरिटी फ़ाउन्डेशनों — द्वारा प्रचारित-प्रसारित किया जाता है, जो परिवर्तन के खोखले नारों तो देते हैं लेकिन वास्तव में इसी विचार का प्रचार करते हैं कि 'पूँजीवादी व्यवस्था का कोई विकल्प नहीं है', जबकि वो हमारा दम घोंट रही है।

हमारे नज़रिए में भविष्य सिर्फ कैलेंडर की कोई तारीख नहीं है। वह एक टूटन है। वह मौजूदा व्यवस्था से एक अलगाव है — सामाजिक संबंधों, राजनीतिक सत्ता और इंसानी संभावनाओं में गहरे बदलाव का नाम है। इस तरह भविष्य की बात करना यूटोपिया नहीं है, बल्कि राजनीति के उस पक्ष को दोबारा हासिल करना है जिसे जानबूझकर दबाया गया है। यानी जिस दुनिया में हम रहते हैं उससे मूलतः भिन्न दुनिया की कल्पना करने और उसका निर्माण करने की क्षमता को पुख़्ता करना, जिसे बीसवीं और इक्कीसवीं सदी की समाजवादी और राष्ट्रीय मुक्ति परियोजनाओं ने बनाने का प्रयास किया था। वे प्रयास भले असमान रहे थे, लेकिन उनसे कुछ ठोस आकार बन रहा था। ऐसा दृष्टिकोण प्रबंधित निरंतरता (सुधारवाद) और अनियोजित विघटन (आपदावाद) दोनों विचारों को अस्वीकार करता है। शासक वर्ग झूठे भविष्यों के ख़्वाब बेचता है, जैसे उद्यमिता का मिथक, हरित पूँजीवाद, या सैन्यीकृत सुरक्षा, लेकिन ऐसी कोई योजना नहीं पेश करता जो मुक्तिकामी हो।

भविष्य के इस दृष्टिकोण का विकास मार्क्सवादी दार्शनिक अर्न्स्ट ब्लोख के 'अभी-नहीं' (नोख-निख़्ट) के विचार से हुआ है।[6] मार्क्स के लेखों के आधार पर ब्लोख ने लिखा था कि भविष्य कोई अमूर्त चीज़ नहीं है जिसे कल पर टाल दिया जाए, बल्कि एक सक्रिय शक्ति है जो वर्तमान के भीतर समाई हुई है, और वर्तमान की बेड़ियों से बाहर आने के लिए संघर्षरत है। ब्लोख का मानना है कि वास्तविकता अधूरी है, और इसलिए वे उन दार्शनिक धाराओं से अलग हैं जो दुनिया को बंद, पूर्ण और पूरी तरह

व्याख्यायित मानती हैं। उनका तर्क था कि वर्तमान ऐसी प्रवृत्तियों, आकांक्षाओं और विरोधाभासों से भरा है जो उससे आगे की ओर इशारा करते हैं। 'अभी-नहीं' कोई यूटोपिया नहीं है जो इतिहास के ऊपर तैरता हो, बल्कि एक अप्रकट संभावना है, जो भौतिक परिस्थितियों और सामूहिक संघर्ष में छिपी है। 'अभी-नहीं' का भाव हम बांडुंग सम्मेलन (1955) के अंतिम ज्ञापन में, गुटनिरपेक्ष आंदोलन शिखर सम्मेलन (1961) के बेलग्रेड घोषणापत्र में, ट्राईकॉन्टिनेंटल सम्मेलन (1966) के प्रस्तावों में, और संयुक्त राष्ट्र महासभा (1974) द्वारा पारित नई अंतरराष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की घोषणा में देख सकते हैं — जहाँ उपनिवेशवाद-विरोधी संघर्षों के सपनों को अभिव्यक्ति मिली। इस भाव को हम अक्टूबर क्रान्ति (1917), वियतनामी क्रान्ति (1945), चीनी क्रान्ति (1949) और क्यूबाई क्रान्ति (1959) के बाद शुरू हुईं क्रांतिकारी प्रक्रियाओं में भी देख सकते हैं।[7]

इस मार्क्सवादी परम्परा में भविष्य अपरिहार्य/अटल नहीं है। यह दृष्टि दो भौतिकवादी सिद्धांतों पर टिकी है जो पूँजीवादी व्यवस्था के विरोधाभासों से उभरते हैं।

पहला सिद्धांत यह है कि इतिहास की वास्तविक गति उत्पादक शक्तियों को विकसित करती है और सामाजिक अधिशेष का विस्तार करती है। पर क्योंकि यह विस्तार निजी सम्पत्ति के क़ब्ज़े में रहते हैं, इससे जनता के बड़े हिस्से के लिए असमानता और सामाजिक पीड़ा बढ़ती है। यह पहचानना ज़रूरी है कि आज की उत्पादक शक्तियाँ केवल कारखानों और मशीनरी तक सीमित नहीं हैं। उनमें देखभाल का काम, डिजिटल संरचनाएँ, और वैश्विक आपूर्ति शृंखलाएँ आदि भी शामिल हैं, जो सामूहिक श्रम से चलती हैं। यह नोट करना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि पूँजीवाद इन शक्तियों का विकास तो करता है किन्तु उनकी संभावनाओं को कमज़ोर भी करता है — निजी स्वामित्व के ज़रिए, प्लैटफ़ॉर्म पूंजी की तानाशाही के ज़रिए, यूनियनें तोड़कर, कटौतियाँ करके, सेना को हावी करके या पूँजीवादी नियन्त्रण के दूसरे तरीक़ों से।

दूसरा सिद्धांत यह है कि पूँजीवाद से उत्पन्न सामाजिक पीड़ा ज़िल्लत और आक्रोश पैदा करती है, जिनसे स्वतःस्फूर्त विद्रोह खड़े हो सकते हैं। किन्तु ऐसे संघर्ष अपने आप ही मुक्तिकामी दिशा में नहीं बढ़ते। उन्हें राजनीतिक ताक़तें या तो लोगों की ठोस माँगों को आगे बढ़ाकर समाजवाद की ओर मोड़ सकती हैं, या उसके विपरीत, उन माँगों को विकृत करके लोगों को एक-दूसरे के ख़िलाफ़ एक विषैले, समाज-विरोधी एजेंडे की तरफ़ मोड़ सकती हैं।[8]

इसलिए भविष्य ऐसी चीज़ नहीं है जो हम पर घटित होती है, बल्कि ऐसी चीज़ है जिसे हमें निर्मित करना है। और हम उसका निर्माण केवल उन संरचनाओं में दरार डालकर ही कर सकते हैं जो ज़िल्लत और पीड़ा पैदा करती हैं। ऐसा दृष्टिकोण भाग्यवाद और अपरिहार्यता से बिलकुल अलग है, और हमें याद दिलाता है कि इतिहास खुला है और वर्तमान में कई संभावनाएँ मौजूद हैं जिन्हें संघर्ष के द्वारा सक्रिय किया जा सकता है।

इस परंपरा में उम्मीद कोरा आशावाद या निष्क्रिय प्रतीक्षा नहीं है, बल्कि बेहतर दुनिया रचने का दृढ़ संकल्प है। यह संकल्प ज़िल्लत, उत्पीड़न तथा मुसीबतों भरी ज़िंदगी को नियति के रूप में अस्वीकार करने से आता है। वैश्विक दक्षिण के आंदोलन, जो हमारे संस्थान के कार्य का मार्गनिर्देशन करते हैं, उम्मीद को विलासिता की चीज़ नहीं मानते। वे मानते हैं कि उम्मीद गरिमा के लिए सामूहिक प्रयास कर रहे किसानों, मज़दूरों और महिलाओं के अनेकों आंदोलनों तथा संगठनों के संघर्ष से पैदा होती है।[9] ये आंदोलन वर्तमान के एक बेहतर रूप के लिए नहीं लड़ रहे, बल्कि एक बिल्कुल अलग सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए लड़ रहे हैं। उनके लिए भविष्य कैलेंडर के हिसाब से नहीं बल्कि संरचनात्मक रूपान्तरण से आएगा। उम्मीद करने का मतलब है यह पहचानना कि वर्तमान असह्य और परिवर्तनीय है, तथा शोषण व उत्पीड़न की स्थितियाँ न तो प्राकृतिक हैं और न ही अंतिम। ऐसी उम्मीद शासक वर्ग को अच्छी नहीं लगती, क्योंकि यह ऐसी शक्ति है जो इंसान की चेतना को बदल सकती है, और लोगों को वर्तमान को सहने की कोशिशों से हटाकर भविष्य बनाने के काम के लिए प्रेरित कर सकती है।

विघटन (मौजूदा व्यवस्था में दरार डालने) की इस परंपरा में भविष्य कोई व्यक्तिगत सर्जना नहीं है — उसका एक सामूहिक चरित्र है। पूँजीवादी संस्कृति हमें व्यक्तिगत भविष्यों के बारे में सोचने के लिए प्रोत्साहित करती है, जैसे करियर, घर, व्यक्तिगत सुरक्षा, और 'आत्म-सुधार' की अंतहीन परियोजना, पर परिवर्तन की सामूहिक जगहों को बंद कर देती है। यह संस्कृति सामूहिक ज़िम्मेदारी या सामाजिक रूपान्तरण की नहीं, बल्कि व्यक्तिगत चिंताओं को बढ़ाने की संस्कृति है। पूँजीवाद में कैलेंडरबद्ध भविष्य को कंट्रोल किया जा सकता है, यानी उसका पूर्वानुमान, निर्धारण, मूल्यांकन आदि कर उसे सुरक्षित किया जा सकता है। इसका प्रबंधन करने वाले संस्थानों को निष्पक्ष बताया जाता है तथा उनके निर्णयों को राजनीतिक नहीं तकनीकी अनिवार्यता के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस तरह जनता की बजाय जनता के भविष्य के बारे में विशेषज्ञ, बाज़ार नियम, सरकार तथा सुरक्षा तंत्र आदि फ़ैसला लेते हैं। ये संस्थान कोई मुक्तिकामी रास्ता नहीं दिखाते, बस आपदा/संकट को मैनेज करते हुए उसे जारी रखने की ज़मीन तैयार करते हैं। इसी ज़मीन से एक ख़ास क़िस्म की चरम दक्षिणपंथी कट्टरता पैदा होती है,

जो सामाजिक बहिष्कार, श्रेणीबद्धता और हिंसा पर आधारित एक झूठे भविष्य की अवधारणा प्रस्तुत करता है। इस तरह का दक्षिणपंथ दरअसल पूँजीवाद की ही असमर्थता का एक लक्षण है क्योंकि वह सकारात्मक भविष्य बना नहीं कर सकता।[10]

लेकिन भविष्य इस दक्षिणपंथी कट्टरता द्वारा भी निर्मित नहीं किया जा सकता। इस काम को मेहनतकशों की सम्प्रभुता की जगह से पुनर्स्थापित करने की ज़रूरत है। न तो संकट अंतिम सच है, और न ही मुक्ति। संकट के ख़िलाफ़ लड़ना होगा और मुक्ति के लिए लड़ना होगा। विच्छेद (दरार) या संरचनात्मक बदलाव के दृष्टिकोण से इस काम के लिए हमें व्यक्तिगत प्रगति की दिशा में आगे बढ़ने की नहीं, बल्कि संगठित शक्तियों की ज़रूरत होगी। ऐसी शक्तियाँ जो सत्ता का सामना कर सकें, जैसे राजनीतिक दल, ट्रेड यूनियन, और सामाजिक आंदोलन। इन शक्तियों के बिना 'अभी-नहीं' एक दिशाहीन सपना ही बना रहेगा। उम्मीद को बरकारार रखने के लिए ढाँचा, अनुशासन और दृढ़ता जरूरी हैं।

भविष्य ऐसी चीज़ नहीं है जो मानव इतिहास के बाहर स्थित हो। वह किसी न किसी रूप में उन संघर्षों में विद्यमान है जो एक नई वैकल्पिक दुनिया का पूर्वाभास देते हैं। ऐसे कई संघर्षों के उदाहरण हमारे सामने हैं। जैसे श्रम के सहकारी रूप, देखभाल की सहकारी प्रथाएँ, सहभागी लोकतंत्र के प्रयोग, तथा चीन व क्यूबा जैसे देशों में समाजवादी निर्माण की अधूरी और विवादित प्रक्रियाएँ।[11] ये संघर्ष बेमतलब कोशिशें नहीं कर रहे बल्कि अपने-अपने तरीक़े से एक अलग सामाजिक व्यवस्था का नमूना पेश कर रहे हैं। इनका अध्ययन करने का उद्देश्य उन्हें रोमानी बनाना नहीं है, बल्कि उनके महत्त्व और उनकी अप्रकट संभावनाओं को समझना है। ये संघर्ष हमें याद दिलाते हैं कि जिस दुनिया का निर्माण हम करना चाहते हैं वह कोई अमूर्त क्षितिज नहीं, बल्कि एक ठोस संभावना है। एक मार्क्सवादी का काम भविष्य की भविष्यवाणी करना नहीं है, बल्कि उसके निर्माण के लिए जनता को संगठित करना है। वर्तमान से अलग कुछ देखने के लिए स्पष्टता, साहस और सामूहिक अनुशासन की आवश्यकता होती है। भविष्य तभी आ सकता है जब आज में दरार डालने की कोशिश करेंगे। इसलिए भविष्य संघर्ष का क्षेत्र है। उसके लिए लड़ने के लिए उन सभी शक्तियों की पहचान करना ज़रूरी है जो इस काम में रुकावटें खड़ी करती हैं

सिल्वानो लोरा (डोमिनिकन गणराज्य), सेरिग्राफ़ (प्रिंट), 1976,
संस्करण 18/60, आकार: 640 x 570 मि.मी.

भविष्य के शत्रु

भविष्य कोई खाली जगह नहीं है जो मानवीय आकांक्षा से भरे जाने की प्रतीक्षा कर रहा हो। शक्तिशाली ताक़तें उसके लिए सक्रिय रूप से योजनाएँ बनाती हैं, ढाँचे खड़े करती हैं और उसे रोकने के सभी प्रयास करती हैं ताकि प्रभुत्व के मौजूदा संबंध ज्यों के त्यों बने रह सकें। भविष्य के शत्रु अमूर्त नहीं हैं बल्कि वो ठोस शक्तियाँ हैं जो वर्तमान व्यवस्था को भविष्य तक ले जाना चाहती हैं।[12] भविष्य के चार मुख्य शत्रु हैं — वित्तीय पूँजी, प्लैटफ़ॉर्म पूँजी, निष्कर्षणवाद और सैन्यवाद। ये शक्तियाँ केवल वर्तमान के सामाजिक संबंधों को बनाए रखने के साथ ही भविष्य पर भी ही क़ब्ज़ा जमाने का प्रयास करती हैं।

वित्तीय पूँजी इस तारामंडल के केन्द्र में विराजमान है। उपनिवेशवाद और नव-उपनिवेशवाद की आमदनी, निवेश प्रवाहों, सट्टेबाज़ी के जादू और ऋण की शक्ति पर नियंत्रण के ज़रिए वित्तीय पूँजी राष्ट्रों और समाजों को अनुशासन में रखती है, और उनके सम्भावित भविष्यों के दायरे को संकुचित करती है।[13] क्रेडिट रेटिंग एजेंसियाँ, बहुपक्षीय ऋणदाता, और निजी वित्तीय संस्थान — जो अधिकतर उत्तरी वैश्विक क्षेत्र में स्थित हैं — उत्तर के शासक वर्ग के हक़ में भविष्य के योजनाकारों की तरह काम करते हैं। वे सुनिश्चित करते हुए कि आने वाला कल मानवीय समृद्धि के बजाय पूँजी संचय के लिए अनुकूल बना रहे। अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF), विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन और कई अन्य संस्थानों के आदेश ऋणग्रस्त पूर्व-उपनिवेशित देशों के लिए एक भौतिक वास्तविकता बन जाते हैं।[14]

प्लैटफ़ॉर्म पूँजी — पूँजीवादी टेक्नॉलजी एकाधिकार कंपनियाँ नवाचार और दक्षता को डाटा निष्कर्षण, श्रम के पुनर्संगठन और सामाजिक जीवन के विखण्डन की दिशा में मोड़ देती हैं। एल्गोरिदम समय, ध्यान (attention) और इच्छा का प्रबंधन करते हैं, जबकि प्लैटफ़ॉर्म श्रमिक मज़दूरों को उनकी स्थिरता और सामूहिक शक्ति से वंचित कर देता है।[15]

निष्कर्षणवाद — जलवायु आपदा के वैज्ञानिक साक्ष्यों के बावजूद, तेल, गैस, कोयला, खनन और कृषि-व्यवसाय समूह ऊर्जा प्रणालियों, श्रम बाज़ारों और राज्य की नीतियों को आकार दे रहे हैं। उनकी योजना के तीन ही स्तंभ हैं: निष्कर्षण करो, मुनाफ़ा कमाओ, और भूल जाओ। मिसाल के तौर पर, जलवायु संकट का कारण दूरदर्शिता का अभाव नहीं है, बल्कि पूँजीवादी निगमों के सोचे समझे फ़ैसलों का परिणाम है, क्योंकि उनके लिए ग्रह का विनाश संचय की एक स्वीकार्य लागत है।[16]

सैन्यवाद — पूँजीवादी व्यवस्था द्वारा उत्पन्न युद्ध, विस्थापन और जलवायु संकटों का हल सामाजिक और राजनीतिक समाधान से नहीं किया जाता, बल्कि एक स्थायी युद्ध अर्थव्यवस्था से किया जाता है। यानी राजनीतिक समस्याओं पर सैन्य समाधान थोपती है। साम्राज्यवादी केन्द्रों में सैन्यवाद शस्त्र संचय, सीमा शासन, निगरानी और आपातकालीन शासन के सामान्यीकरण के रूप में प्रकट होता है। वैश्विक दक्षिण में यह साम्राज्यवादी आक्रमण, छद्म युद्ध, क़ब्ज़े, और दुर्लभ सार्वजनिक संसाधनों को सैन्य गतिविधियों या सुरक्षा संरचनाओं की ओर मोड़ दिए जाने के रूप में सामने आता है। इन उपायों से हमेशा हथियार उद्योग को फ़ायदा होता है। सैन्यवाद राजनीतिक संभावनाओं को कम कर देता है: आपातस्थितियों का हवाला देकर तानाशाही उपायों को न्यायसंगत ठहराया जाता हैं, असहमति का दमन किया जाता हैं, और डर का समाजीकरण किया जाता हैं। दुनिया के बड़े हिस्सों में, और विशेषकर वैश्विक दक्षिण में, भविष्य किसी वादे के रूप में नहीं बल्कि स्थायी अस्थिरता, विस्थापन और मृत्यु के रूप में दिखाई देता है। युद्ध उन संकटों के प्रबंधन का एक तंत्र बन जाता है जिन्हें पूँजीवाद स्वयं पैदा करता है।[17]

भविष्य के ये शत्रु केवल सामाजिक रूपान्तरण में बाधा नहीं डालते, वे सक्रिय रूप से एक ऐसे भविष्य का निर्माण करते हैं जिसमें मुट्ठी-भर लोगों के विशेषाधिकार सुरक्षित रहते हैं, जबकि अधिकतर मानवता को चिंताओं, असुरक्षा और निराशा। इन शक्तियों को चुनौती दिए बिना भविष्य को पुनः हासिल नहीं किया जा सकता।

परिवर्तन के लिए तैयार सामाजिक ताक़तें

जब सम्पत्तिधारी वर्ग शाश्वत वर्तमान पर ज़िद किए बैठा हो, तो भविष्य को सामूहिक जन-संघर्ष से ही वापस हासिल किया जा सकता है। मौजूदा व्यवस्था से विच्छेद कर पाने की सामर्थ्य रखने वाली सामाजिक ताक़तें यहीं मौजूद हैं, भले ही वे टुकड़ों में बँटी हैं, विषम हैं, और उन्हें जानबूझकर ओझल किया गया है। इनमें औपचारिक और अनौपचारिक दोनों सेक्टरों के मज़दूर, किसान और भूमिहीन खेतिहर मज़दूर, महिलाएँ, युवा, उत्पीड़ित समुदाय, और वे सभी समूह शामिल हैं जिन्हें मार्क्स ने 'अतिरिक्त आबादी' कहा था। यानी, वे सभी लोग जो पूँजीवादी संचय के कारण हाशिये पर हैं लेकिन पूँजीवाद के लिए अनिवार्य हैं, एक आरक्षित श्रम-सेना के रूप में या सामाजिक पुरुत्पादन श्रमिक के रूप में।[18]

'उत्तर-मार्क्सवाद' और बिखरे हुए राजनीतिक कर्ताओं पर नई-नई सैद्धान्तिक बहस के बावजूद, मज़दूर वर्ग — शहरी हो या ग्रामीण — अभी भी धुरी पर बना हुआ है, हालाँकि उसका गठन बदला ज़रूर है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन और विश्व बैंक की रिपोर्टें बताती हैं कि कुल वैश्विक श्रम-बल तक़रीबन चार अरब के आसपास है (यानी वे सब जो काम पर हैं और जो काम तलाश रहे हैं)। बड़े क्षेत्रों के हिसाब से वैश्विक रोज़गार का अनुमानित ब्यौरा कुछ इस तरह है::

- कृषि: 92 करोड़ 30 लाख
- उद्योग: 80 करोड़
- सेवाएँ: 1 अरब 80 करोड़
- परिवहन/रसद: 23 करोड़
- प्लैटफ़ॉर्म श्रमिक: 15 करोड़ 40 लाख से 43 करोड़ 50 लाख[19]

कारख़ानों के मज़दूर आज सेवा, परिवहन, गोदाम, देखभाल, डिलीवरी और प्लैटफ़ॉर्म (यानी उबरीकृत) कामगारों के बराबर में खड़े हैं। वैश्विक दक्षिण के अधिकतर हिस्सों में अनौपचारिक मज़दूरी अपवाद नहीं, बल्कि चलन है। ये कामगार — कारख़ाने में खटें, खेत में, या गोदाम में — हर वक़्त अनिश्चितता के साये में जीते हैं: क़ानूनी संरक्षण या तो कमज़ोर है या है ही नहीं, और बेरोज़गारी का डर हमेशा सिर पर मँडराता रहता है। फिर भी, यूनियनों की सिकुड़ती ताक़त के बावजूद, इन कामगारों के हाथ में एक निर्णायक शक्ति है: ये ही माल पैदा करते हैं, ये ही उसे ढोते हैं, ये ही ज़मीन जोतते हैं, ये ही खदानें खोदते हैं, ये ही बीमारों-बूढ़ों की देखभाल करते हैं, ये ही शहर बनाते हैं, और ये ही रोज़मर्रा की ज़िन्दगी को चलाते हैं। उनके संघर्ष, वे चाहे रसद केन्द्रों में हड़तालें या लेकर भूमिहीन मज़दूरों की बग़ावतें या घरेलू कामगारों की काम-बन्दी, साबित करते हैं कि पूँजी और श्रम के बीच का अन्तर्विरोध ख़त्म नहीं हुआ है। संघर्ष हमेशा ऐसे नहीं आते कि मज़दूर सचेतन रूप से पूँजी के ख़िलाफ़ संगठित हो। वे अक्सर दमन की दूसरी धुरियों — जैसे पितृसत्ता और सामाजिक ऊँच-नीच (जाति, नस्ल) — से होकर सतह पर आते हैं, या पीढ़ीगत तजुर्बे और दूसरी सामाजिक बुनावटों से गतिशील होते हैं। महिला आन्दोलनों ने, मिसाल के तौर पर, यह उजागर किया है कि आर्थिक व्यवस्थाएँ शरीरों और वक़्त के शोषण पर टिकी हैं — ख़ासकर स्त्रियों के शारीरिक श्रम और वक़्त पर, और उसमें भी ख़ासकर काली, प्रवासी, और नस्ली रूप से चिन्हित मज़दूर-तबक़े की महिलाओं पर। इसी तरह गरिमा के सवाल से जुड़े संघर्ष उन पहचानों से होकर गुज़रते हैं जो अपने-आप में वर्गीय नहीं हैं, लेकिन जो यह बताती हैं कि पूँजीवाद किस मक्कारी से

पुरानी ऊँच-नीच को अपने संचय के काम में लगाता है। मिसाल के तौर पर, जाति और नस्ल की व्यवस्था को पूँजीवाद अपने मतलब के लिए इस्तेमाल और पुन: संगठित करता है। इसलिए गरिमा के लिए लड़ी जा रही लड़ाइयाँ भी समाजवादी संघर्ष का आधार तय करती हैं। 'अतिरिक्त जनसंख्या' — प्रवासी, बेरोज़गार, भूमिहीन किसान और शहरी ग़रीब — को अक्सर राजनीतिक रूप से सीमांत माना जाता है, लेकिन ये समूह ही पूँजीवादी व्यवस्था के सबसे गंदे रूप का अनुभव करते हैं। आवास, बुनियादी ज़रूरतों और सम्मान के लिए उनकी लड़ाइयाँ दरअसल ज़िन्दगी को क़ायम रखने की लड़ाइयाँ हैं। ये तमाम संघर्ष दिखाते हैं कि मज़दूर वर्ग के भीतर कितनी ऊर्जा है, जो पूँजीवाद के विरुद्ध एक ऐतिहासिक मोर्चा खड़ा करने और भविष्य के लिए लड़ने में समर्थ है।

हमारे शहरों और देहातों को हिला देने वाले बहुत-से बड़े विरोध संघर्ष या तो छोटे-छोटे संगठनों से आकार पाते हैं या सोशल मीडिया पर व्यक्तियों से की गई अपीलों से आगे खड़े होते हैं। पूँजी बँटवारे पर फलती-फूलती है: औपचारिक बनाम अनौपचारिक, शहर बनाम देहात, आदमी बनाम औरत, नागरिक बनाम प्रवासी।[20] और आज, खण्डित वर्ग संरचना और सामाजिक संगठन का बिखराव राजनीतिक संगठन और सैद्धांतिक कार्य-एकता के आगे बड़ी रुकावटें बन कर खड़े हैं। इस तरह के कई उदाहरण हमारे सामने हैं कि जनता के आक्रोश को प्रतिक्रियावादी ताक़तें कैसे हड़पती हैं या आक्रोश मायूसी में कैसे बदल जाता है। वर्तमान से विच्छेद के लिए ज़रूरी है कि विविधता को मिटाए बिना एकता का निर्माण हो, ऐसी राजनीतिक परियोजनाएँ खड़ी की जाएँ जो साझा हितों को ज़बान दे सकें। ऐसे संगठन के बिना सामाजिक ताक़तें बस प्रतिक्रिया करती रह जाती हैं। पर ऐसा संगठन होने पर सामाजिक ताक़तें इतिहास की कर्ता बन जाती हैं — जो भविष्य को अपना बनाने की हैसियत रखती हैं। दुनिया भर में वामपन्थ के सामने आज असल संगठनात्मक सवाल यह है कि जनता जिस तकलीफ़ और ज़द्दोजहद से गुज़रती है उन वस्तुनिष्ट/तथ्यात्मक स्थितियों में से व्यक्तिपरक/विशेष समूहों की माँगों पर आधारित विभिन्न संघर्ष-मंचों का निर्माण कैसे किया जाए।

समय

पूँजीवाद समय के अपने विचार को समाजों पर थोपता है — एक ऐसा विचार जिसमें जल्दबाज़ी तो है पर दिशा नहीं, रफ़्तार तो है पर मंज़िल नहीं, संकट तो है पर हल नहीं। एक सनकी-सी हड़बड़ी सामाजिक ज़िन्दगी को अपनी गिरफ़्त में ले लेती है। अपने दिन पर क़ाबू रखने की हमारी ताक़त छिन जाती है, और एक अव्यवस्था पैदा होती है जो हमारे आराम और फ़ुरसत के समय को भीतर से खा जाती

है। फ़ुरसत के समय के बिना, समुदाय निर्माण के लिए आसानी से वक्त नहीं निकलता। (हालाँकि यह भी देखा गया है कि सरकारों द्वारा सामाजिक नीति से हाथ खींच लेने के बाद मज़दूर-वर्ग की महिलाओं ने मिलकर सामाजिक पुनरुत्पादन (देखभाल कार्यों) के मंच बनाए, जिनके चलते अनेक विरोध आंदोलनों में उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण रूप से बढ़ी है)। समय के बिना, कार्य-स्थलों, गली-मोहल्लों और समुदायों में संगठनात्मक कार्य करना असम्भव है।

पूँजीवाद के अन्तर्विरोध ख़ुद-ब-ख़ुद संघर्ष उत्पन्न करते हैं। ऐसे संघर्ष अक्सर कम मज़दूरी और काम की ख़राब स्थितियों से भड़कते हैं, लेकिन बहुत बार सामाजिक पुनरुत्पादन की ज़रूरतों से भी उभरते हैं, जैसे पानी, सार्वजनिक जगह, सस्ते अनाज और ईंधन आदि की कमी से। ऐसे संघर्ष कभी उन सामाजिक ताने-बानों और रिश्तों पर खड़े होते हैं जो समय के साथ स्थापित हुए होते हैं, और कभी काम और जीवन-स्तर में तेज़ गिरावट से अचानक फूट पड़ते हैं। ये सहज उभार, वीरतापूर्ण तो होते हैं पर पर्याप्त नहीं हैं; ये अनुशासित संगठन के बग़ैर वर्तमान में उथल-पुथल तो मचा सकते हैं, पर शायद ही कभी भविष्य को नया रूप दे पाते हैं। इतिहास की प्रमुख क्रान्तियों, लंबे समयों तक चकी सन्तुलित क्रान्तिकारी गतिविधियों की कहानियाँ हैं, जिन्होंने समुदायों को दुनिया को बदल देने वाले महान संघर्षों के लिए तैयार किया। सहज संघर्ष वास्तविक क्रोध और शिकायतों का आईना हैं। वे सड़कें घेर सकते हैं, उम्मीद की चिनगारी जला सकते हैं, और हुकूमतें तक गिरा सकते हैं। लेकिन इतिहास का तजुर्बा (जैसे 2011 का मिस्र) बताता है कि संगठनात्मक निरन्तरता और मज़बूती के बिना ये लमहे दमन, सह-विलयन, और थकान की भेंट चढ़ जाते हैं। सम्पत्तिधारी वर्ग वक्त को रणनीतिक तरीक़े से बरतना जानता है — वे दशकों की योजनाएँ बनाते हैं। जो आंदोलन केवल विरोध की तात्कालिकता में कार्य करते हैं, वे भविष्य बनाने का दीर्घकालिक काम अपने शत्रुओं के हाथों सौंप देते हैं।

संगठन

तात्कालिकता से आगे जाकर कुछ टिकाऊ खड़ा करने के लिए संगठन चाहिए — जिनके सामाजिक आन्दोलनों से लेकर लोकतान्त्रिक-केन्द्रवादी लेनिनवादी पार्टियों जैसे कई रूप हो सकते हैं। इन दो रूपों के बीच की बहस इस डोसियर का विषय नहीं है। हमारा मक़सद यह बताना है कि राजनीतिक संगठन (भले उसका जो भी रूप हो) ही वो ज़रिया है जिससे वक़्त को मुक्ति की दिशा में ढाला जाता है। पार्टियाँ, मोर्चे, ट्रेड यूनियन, किसान संगठन, महिला संघ और युवा आंदोलन — ये सब विशिष्ट किन्तु अन्तर्सम्बद्ध भूमिकाएँ निभाते हैं। लेनिनवादी ढाँचे की पार्टियाँ दूरगामी कार्यक्रमों की योजना बना

सकती हैं और राज्य सत्ता को चुनौती दे सकती हैं। जन संगठन संघर्षों को दैनिक जीवन में स्थापित कर सकते हैं और समुदायों को ठहराव और निरन्तरता मुहैय्या करा सकते हैं। मोर्चे विविध ताक़तों के दरमियान वैचारिक एकरूपता की माँग किए बग़ैर एकता को सम्भव बना सकते हैं। संगठन ही बिखरे और परेशानहाल मज़दूर वर्ग को अपने बचे-खुचे समय को साझा करने का (सामाजिक बानाने का), और उन्हें अपनी शर्तों पर समाज बनाने का मौक़ा देता है।

अनुशासन

लेनिनवादी पार्टी की ख़ूबी यही है कि इस परम्परा में अनुशासन को केन्द्रीय स्थान हासिल है। अनुशासन का मतलब आज्ञापालन या नौकरशाही कठोरता से नहीं है (हालाँकि ऐसी पार्टियाँ ध्यान न देने पर इन बुराइयों में गिर सकती हैं)। अनुशासन का मतलब है ऐसे कैडर तैयार करना जो राजनीतिक रूप से शिक्षित हों और पार्टी-स्वरूप की अनिवार्यता को समझें, उन सामूहिक प्रक्रियाओं को समझें जो एक साझा राजनीतिक समझ या कार्यक्रम गढ़ने के लिए जरूरी हैं, पार्टी के भीतर प्रतिनिधित्ववादी नेतृत्व की आवश्यक संरचनाओं को समझें, और साझा लक्ष्यों, रणनीतियों, और जवाबदेही के तरीक़ों के प्रति पूर्ण समर्पण रखें। अनुशासन संगठनों को ऊर्जा सहेजने, तजुर्बे से सीखने, और संकट के लमहों से आगे भी टिके रहने का माद्दा देता है — संगठन विद्रोह को एक परियोजना में बदल देता है।

इस पूरे काम में मुख्य एजेंट वे लोग हैं जिन्हें अंतोनियो ग्राम्शी ने ‘नए बुद्धिजीवी’ का नाम दिया था। राजनीतिक परियोजना के वे स्थायी क़ार्यकर्ता जो मज़दूर वर्ग, किसानों और जनआन्दोलनों की भीतर से आते हैं।[21] उनका काम है स्पष्टीकरण, विश्लेषण-संश्लेषण और संचार के ज़रिए जीवित अनुभव को राजनीतिक रणनीति में बदलना। वे आंदोलनों को यह समझने में मदद करते हैं कि वे किसके ख़िलाफ़ लड़ रहे हैं — और यह भी कि भविष्य में क्या-क्या शामिल होना चाहिए।

अंतरराष्ट्रीयतावाद

पूँजीवाद में दरार डालने का काम राष्ट्रीय सरहदों के भीतर टिकाऊ नहीं रह सकता। पूँजीवाद वित्त, व्यापार, सैन्य गुटों, आपूर्ति शृंखलाओं और वैचारिक संस्थानों अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संगठित है। इसलिए जो ताक़तें भविष्य का निर्माण करना चाहती हैं, उन्हें भी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संगठित होना होगा। अंतरराष्ट्रीयतावाद नैतिकता या भावुकता की जगह से आना चाहिए। विश्व अर्थव्यवस्था की संरचना और उत्पीड़ितों के समान हालात अंतरराष्ट्रीयतावाद को व्यावहारिक अनिवार्यता बनाते हैं। इसका मतलब

है मुल्कों और संघर्षों के आर-पार रिश्ते बनाना, इन्क़लाबी प्रक्रियाओं से सबक़ लेना, साम्राज्यवाद के विरुद्ध सम्प्रभुता की रक्षा करना, और राजनीतिक शिक्षा, अभियानों और भौतिक एकजुटता के विभिन्न रूपों में तालमेल बैठाना। अंतरराष्ट्रीयतावाद के बिना सफलताएँ अकेली और बेसहारा रह जाती हैं, लेकिन उसके साथ, स्थानीय, राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तरों पर संघर्ष उस पैमाने तक पहुँचने लगते हैं जो एक वैश्विक पूँजीवादी व्यवस्था का सामना करने के लिए आवश्यक है।

भविष्य को एक ही वार में नहीं छीना जा सकता। उसे सब्र से, सामूहिक ढंग से, और होशियारी से खड़ा करना होगा। वक़्त संघर्ष के लिए गुंजाइश पैदा करता है, संगठन उसे शक्ल देता है, अनुशासन उसे सहनशक्ति देता है, और अंतरराष्ट्रीयतावाद उसे विस्तार देता है। शासक वर्ग के उस नियोजित भविष्य के मुक़ाबले, जो शोषण और बहिष्कार पर खड़ा है, ये औज़ार उत्पीड़ितों को अपने ख़ुद के भविष्य की योजना बनाने की हिम्मत देते हैं — एक ऐसा भविष्य जो गरिमा और बराबरी, और ज़िन्दगी से जुड़ा हो।

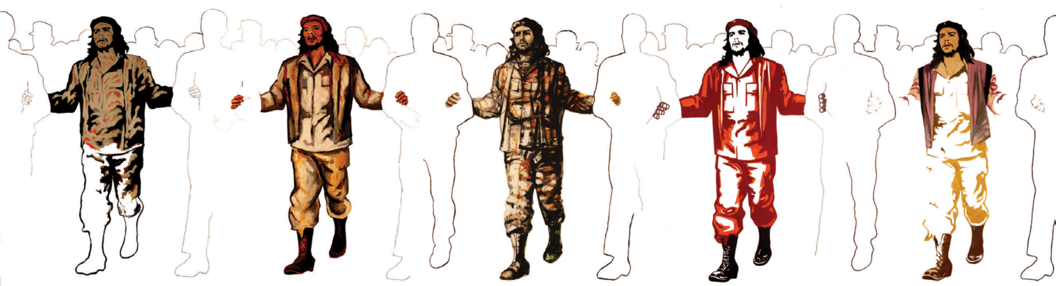

अल्फ्रेडो प्लांक, इग्नासियो कोलोम्ब्रेस, कार्लोस सेस्सानो, हुआन मैनुएल सांचेज़ और नानी कैंपुरो (अर्जेंटीना),
चे (सामूहिक श्रृंखला), 1968, कैनवास पर तेलचित्र, प्रत्येक 195 x 150 से.मी.

भाग 2: भविष्य का निर्माण

वर्तमान के स्थान पर क्या बनाया जाना चाहिए? भविष्य केवल संघर्ष, संगठन और अनुशासन का विषय बनकर नहीं रह सकता; उसे भौतिक, संस्थागत और अंतरराष्ट्रीय रूप भी लेना होगा। इसका अर्थ है स्वामित्व, योजना, संप्रभुता और उन समन्वय के रूपों से जुड़े प्रश्नों का सामना करना, जिनके माध्यम से एक अलग सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखा जा सकता है।

सार्वजनिक स्वामित्व और योजना

भविष्य का प्रश्न स्वामित्व और समन्वय के प्रश्न से अलग नहीं किया जा सकता। पूँजीवाद के तहत, उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व एक छोटे वर्ग को यह तय करने की शक्ति देता है कि क्या उत्पादन होगा, कैसे होगा और किसके लिए होगा। यह शक्ति पूरे समाज के हित में नहीं, बल्कि लाभ, प्रतिस्पर्धा और अल्पकालिक संचय की अनिवार्यताओं के अनुसार प्रयोग की जाती है। परिणामस्वरूप एक गहरा विरोधाभास उत्पन्न होता है: उत्पादन शक्तियाँ अत्यधिक सामाजिकीकृत हो चुकी हैं, जबकि उन पर नियंत्रण सीमित रूप से निजी हाथों में बना रहता है। आज श्रम पहले से ही सामूहिक और अंतरराष्ट्रीय है, लेकिन इस सामूहिक प्रयास के तकनीकी आधार और आर्थिक अधिशेष पर एक अल्पसंख्यक वर्ग का क़ब्ज़ा है। इसलिए, किसी भी समाजवादी भविष्य पर गंभीर चर्चा को इस विरोधाभास का सामना करते हुए संपत्ति संबंधों में परिवर्तन करना होगा।

सार्वजनिक स्वामित्व का मतलब संपत्तियों को निजी हाथों से राज्य के हाथों में कानूनी रूप से स्थानांतरित करना भर नहीं है। स्वयं राज्य भी वर्ग संघर्ष का एक क्षेत्र है और उसे विकास की दिशा को निर्देशित करने के एक साधन के रूप में हासिल करना आवश्यक है। जब ऊर्जा, परिवहन, वित्त, भूमि, संचार और भारी उद्योग जैसे रणनीतिक क्षेत्र सार्वजनिक स्वामित्व में होते हैं, तो समाज को उत्पादन और नवाचार को निजी संचय के बजाय सामूहिक आवश्यकताओं की ओर मोड़ने की क्षमता मिलती है।
पूँजीवाद संसाधनों का व्यवस्थित रूप से ग़लत आवंटन करता है—विलासिता संबंधी उपभोग और विनाशकारी उद्योगों का अत्यधिक उत्पादन करता है, जबकि देखभाल, शिक्षा, स्वास्थ्य और आवास जैसे क्षेत्रों में कमी बनी रहती है। सार्वजनिक स्वामित्व उत्पादन को सामाजिक पुनरुत्पादन, दीर्घकालिक

निवेश और साझा समृद्धि की ओर पुनर्निर्देशित करने के लिए भौतिक आधार प्रदान करता है।
सार्वजनिक स्वामित्व के पक्ष में तर्क तकनीक से भी जुड़ा हुआ है। निजी स्वामित्व के तहत, तकनीकी विकास को लाभप्रदता, बौद्धिक संपदा के एकाधिकार और श्रम अनुशासन के अधीन कर दिया जाता है। नवाचार को लागत कम करने, निगरानी, सैन्यीकरण और ज्ञान की घेरेबंदी की ओर निर्देशित किया जाता है, बजाय इसके कि वह सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम समय को कम करे या सामूहिक कल्याण को बेहतर बनाए।

उत्पादन की शक्तियों पर लोकतांत्रिक नियंत्रण से तकनीक का उपयोग सामाजिक हित में किया जा सकता है: कार्यदिवस को छोटा करने, रोजगार सृजित करने, सार्वजनिक सेवाओं का विस्तार करने, मानव कौशल को बढ़ाने और पारिस्थितिक नुक़सान को कम करने के लिए। वही डिजिटल और लॉजिस्टिक प्रणालियाँ, जिनका उपयोग पूँजीवाद शोषण को तीव्र करने के लिए करता है, अपने भीतर तर्कसंगत और मानवीय उत्पादन तथा वितरण की संभावना भी समेटे हुए हैं।
पूँजीवादी विचारधारा योजना को स्वभावतः अधिनायकवादी और अक्षम बताती है, जबकि बाज़ार को समन्वय के एक तटस्थ और लोकतांत्रिक तंत्र के रूप में प्रस्तुत करती है। वास्तव में पूँजीवाद पहले से ही अत्यधिक योजनाबद्ध है—लेकिन यह योजना पूँजीपतियों के हितों में होती है। बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, वित्तीय संस्थान और सैन्य गठबंधन व्यापक आंतरिक योजना, दीर्घकालिक पूर्वानुमान और रणनीतिक समन्वय में संलग्न रहते हैं।

बाज़ार योजना का स्थान नहीं लेता; बल्कि यह सामाजिक निर्णय-प्रक्रिया को खंडित करता है, ज़िम्मेदारी को अस्पष्ट बनाता है और सामूहिक जीवन को संचय की संकीर्ण तर्क प्रणाली के अधीन कर देता है। क़ीमतें संकेत तो देती हैं, लेकिन तब, जब सामाजिक और पारिस्थितिक क्षति पहले ही हो चुकी होती है। बाज़ार अल्पकालिक लाभप्रदता को बढ़ावा देता है, न कि दीर्घकालिक सामाजिक तर्कसंगतता को। समाजवादी योजना का अर्थ लोकप्रिय जीवन से कटा हुआ नौकरशाही आदेश नहीं है; बल्कि यह समय के साथ सामाजिक श्रम के सचेत और लोकतांत्रिक समन्वय से संबंधित है। योजना पूँजीवादी अल्पकालिकता के ख़िलाफ़ एक समयगत हथियार है। यह समाज को सामूहिक प्राथमिकताएँ तय करने की ओर प्रेरित करती है—जैसे डीकार्बोनाइजेशन (कार्बन उत्सर्जन में कमी), औद्योगिक विविधीकरण, खाद्य संप्रभुता और सार्वभौमिक देखभाल—और उनके अनुसार संसाधनों को संगठित करने की क्षमता देती है।

यह क्षेत्रों (सेक्टर्स) और सामाजिक आवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित करना संभव बनाती है, बजाय इसके कि विकास को बाज़ार प्रतिस्पर्धा के असमान और विनाशकारी परिणामों पर छोड़ दिया जाए। योजना वह माध्यम है जिसके द्वारा समाज इस समझ पर कार्य कर सकता है कि भविष्य स्वतः नहीं बनता, बल्कि उसे सचेत रूप से निर्मित करना पड़ता है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि योजना लोकतंत्र को नकारती नहीं है; बल्कि इसके विस्तार की माँग करती है। योजनाबद्ध व्यवस्था को मुक्ति-दायी बनाने के लिए उसे जनभागीदारी, श्रमिक नियंत्रण और सामाजिक आवश्यकताओं को व्यक्त करने में सक्षम जनसंगठनों में निहित होना चाहिए। पूँजीवाद के तहत श्रम का समाजीकरण पहले से ही विशाल नेटवर्कों के पार समन्वय की माँग करता है; समाजवाद इस समन्वय को पारदर्शी, जवाबदेह और मानव विकास की ओर उन्मुख बनाने का प्रयास करता है। जब श्रमिक, समुदाय और सार्वजनिक संस्थाएँ लक्ष्यों को निर्धारित करने और परिणामों की निगरानी में भाग लेते हैं, तो योजना एक तकनीकी थोपने के बजाय सामूहिक सीखने की प्रक्रिया बन जाती है। इसी प्रकार की प्रक्रियाओं के माध्यम से सामाजिक अधिशेष को शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, संस्कृति और पारिस्थितिक पुनर्स्थापन की ओर सचेत रूप से निर्देशित किया जा सकता है।[22]

एक नए अंतरराष्ट्रीयतावाद की ओर

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद, एक शक्तिशाली समाजवादी गुट के उदय और उपनिवेशवाद-उन्मूलन की लगातार लहरों ने ऐसे अंतरराष्ट्रीयतावाद की नींव रखी, जो साम्राज्यवाद और नव-उपनिवेशवाद के विरोध पर आधारित था। यह नए आर्थिक और सामाजिक मॉडल बनाने और एक नई वैश्विक व्यवस्था बनाने का प्रयास था।[23]

यह अंतरराष्ट्रीयतावाद ऋण संकट, नवउदारवाद के आक्रमण और सोवियत संघ तथा समाजवादी गुट के पतन के साथ ढह गया। इसके स्थान पर अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आईएमएफ) द्वारा थोपा गया एक दिखावटी वैश्वीकरण आया—बाज़ारों का खुलना, उत्पादक क्षेत्रों से राज्य की वापसी, पूँजी नियंत्रणों का हटना, संसाधनों का समर्पण, और शैक्षणिक व सांस्कृतिक अधीनता—जो संप्रभुता के व्यापक क्षरण का प्रतीक था।

सोवियत संघ के पतन के दशकों बाद, एक नए अंतरराष्ट्रीयतावाद के उदय के लिए वस्तुगत परिस्थितियाँ उभर रही हैं। ग्लोबल उत्तर गहरे संकट से गुज़र रहा है, जिसकी पहचान उद्योग-विहीनता और उत्पादन क्षमता के क्षरण से होती है, जबकि चीन और ग्लोबल दक्षिण के देश वैश्विक अर्थव्यवस्था के इंजन के रूप में उभर रहे हैं। ब्रिक्स, शांघाई सहयोग संगठन (एससीओ) और अन्य द्विपक्षीय मंचों का उदय इन बदलती वस्तुगत परिस्थितियों को दर्शाता है।

हालाँकि संयुक्त राष्ट्र और इसकी एजेंसियों पर अब भी संयुक्त राज्य अमेरिका(यूएस) तथा उसके सहयोगियों का प्रभाव बना हुआ है, जिससे उनका प्रभाव कई मामलों में कम हो गया है। दुनिया भर में बढ़ते संघर्ष—ग़ज़ा, वेनेज़ुएला, क्यूबा से लेकर कांगो गणतंत्र और ईरान तक—इस असंतुलन को उजागर करते हैं। इसी तरह आईएमएफ और विश्व बैंक संरचनात्मक समायोजन (Structural Adjustment) नीतियों के माध्यम से अपना प्रभाव बनाए रखते हैं। जलवायु पर बने ढाँचे लोगों के लिए उपयोगी साबित नहीं हुए हैं। महामारी अपने साथ 'वैक्सीन रंगभेद' लेकर आई। इससे भी बुरा यह है कि ग्लोबल दक्षिण के कई बहुपक्षीय संगठन निष्क्रिय हैं या नवउदारवाद की सोच से प्रभावित हैं। एक नई वैश्विक संरचना पर बहस अक्सर 'बहुध्रुवीयता'(multipolarity) पर केंद्रित रही है, लेकिन इसकी सीमाएँ हैं क्योंकि यह शीतयुद्ध जैसी प्रतिस्पर्धात्मक मानसिकता को दोहरा सकती है। इसके विपरीत, नए अंतरराष्ट्रीयतावाद को 'बहुपक्षवाद' (multilateralism) पर आधारित होना चाहिए। इस संदर्भ में सयुक्त राष्ट्र को पुनः सक्रिय करना और यूएन चार्टर को विश्व के लोगों की साझा धरोहर के रूप में बनाए रखना ख़ास महत्त्व रखता है। संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद और संयुक्त राष्ट्र महासभा, दोनों में सुधार की आवश्यकता है, और ग्लोबल दक्षिण के देशों को विश्व स्वास्थ्य संगठन, जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन और अंकटाड जैसी एजेंसियों के लिए एक साझा एजेंडा विकसित करना होगा।

इन संस्थाओं के लिए ऐसी नीतियाँ और कार्यक्रम तैयार करने हेतु नए बौद्धिक और राजनीतिक संघर्ष की तत्काल आवश्यकता है, जो ग्लोबल दक्षिण के लोगों की आकांक्षाओं को सही रूप में व्यक्त कर सकें। नए बहुपक्षवाद के साथ-साथ, वामपंथी और देशभक्त शक्तियों को उन क्षेत्रीय संगठनों का समर्थन और सुदृढ़ीकरण करना चाहिए, जिन्होंने पिछले तीस वर्षों में अपनी दिशा खो दी है, और जहाँ यह संभव न हो, वहाँ नए संगठनों के निर्माण की वकालत करनी चाहिए। 2000 के दशक और शुरुआती 2010 के वर्षों में लैटिन अमेरिका में पिंक टाइड के दौरान बने आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक गठबंधन इस बात का उदाहरण हैं कि क्या संभव है।

समकालीन समय में साहेल देशों के गठबंधन ने अफ़्रीका में अधिक सशक्त एकीकरण की इच्छा को व्यक्त किया है, जबकि ECOWAS (पश्चिमी अफ़्रीकी देशों का आर्थिक समुदाय) की नव-उपनिवेशवादी तर्क प्रणाली का प्रतिरोध भी किया है। इसी तरह, ब्रिक्स द्वारा वित्त, व्यापार, अवसंरचना से लेकर विज्ञान, प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, जलवायु सहयोग और अनुसंधान तक विभिन्न क्षेत्रों में शुरू की गई प्रक्रियाएँ ऐसे क्षेत्रीय संगठनों के लिए एक और मॉडल प्रस्तुत करती हैं।
नया अंतरराष्ट्रीयतावाद संप्रभुता की रक्षा से शुरू होता है, लेकिन वहीं समाप्त नहीं होता। इसे परिवर्तित सामाजिक संबंधों पर आधारित भविष्य की एक अंतरराष्ट्रीयवादी दृष्टि को भी समाहित करना होगा। यह दृष्टि केवल एक देश में साकार नहीं की जा सकती—और न ही केवल राज्यों द्वारा आगे बढ़ाई जा सकती है। इसके लिए दुनिया भर के आंदोलनों की लामबंदी आवश्यक है, ताकि पूँजीवाद से आगे बढ़ा जा सके।

समाजवादियों को चाहिए कि वे भविष्य की दिशा में मज़बूत आधार स्थापित करें, उन परियोजनाओं को बढ़ावा देते हुए, उनसे सीखते हुए और उन पर आगे निर्माण करते हुए, जिनमें शक्तियों के संतुलन को बदलने की क्षमता हो।

फिर भी, कोई भी कार्यक्रम—चाहे वह कितना ही आवश्यक क्यों न हो—अपने आप कायम नहीं रह सकता, जब तक उसे आगे बढ़ाने वाली सामाजिक शक्ति न हो और संघर्ष को प्रेरित करने वाला कोई क्षितिज न हो। यदि भविष्य को संस्थाओं, स्वामित्व, योजना और अंतरराष्ट्रीय समन्वय के माध्यम से निर्मित करना है, तो उसे एक राजनीतिक संवेदना के रूप में भी जिया जाना चाहिए।
वह संवेदना है—आशा।

लुइस गोंज़ालेज़ पाल्मा (ग्वाटेमाला), ला रोसा (गुलाब), 1991,
टोनिंग और हस्त-रंगांकन के साथ जेलटिन सिल्वर प्रिंट, 47 x 48.5 से.मी.

भाग 3: आशा

आज पूँजीवाद अपनी वैधता के संकट से गुजर रहा है, क्योंकि इसके विचार और मूल्य—व्यक्तिवाद, उद्यमिता, उपभोक्तावाद—अब वह सामाजिक गतिशीलता और भौतिक समृद्धि प्रदान नहीं कर पा रहे हैं, जिनका वादा लंबे समय से नवउदारवाद करता आया है। साथ ही, जैसे-जैसे यूएस के नेतृत्व वाला साम्राज्यवादी गुट आर्थिक और राजनीतिक रूप से अपनी शक्ति में गिरावट देख रहा है, वह उन दो क्षेत्रों में और अधिक ज़ोर लगा रहा है, जहाँ उसकी शक्ति अभी भी काफ़ी हद तक अप्रतिद्वंद्वी बनी हुई है: सांस्कृतिक उत्पादन और सैन्य शक्ति।

हालाँकि इनकी अभिव्यक्तियाँ बहुत भिन्न हैं, लेकिन दोनों का उद्देश्य एक ही है—वर्तमान को बनाए रखना और भविष्य की संभावनाओं को सीमित करना। सैन्य आक्रामकता के माध्यम से, यूएस के नेतृत्व वाला गुट उन सभी देशों को दबाव में रखना चाहता है, जो 'वाशिंगटन कन्शेंसस' और निजी पूँजी के हितों के आगे झुकने से इनकार करते हैं, और इस तरह वह अधीनता को अस्वीकार करने वाले किसी भी राजनीतिक परिदृश्य को बंद कर देता है।

सांस्कृतिक उत्पादन के साधनों पर अपने एकाधिकार के ज़रिए, इसका उद्देश्य न केवल सूचना को नियंत्रित करना है - यानी सत्य के रूप में स्वीकृत जानकारी को नियंत्रित करना - बल्कि शोषित जनसमूह की संस्कृति और मूल्यों को भी आकार देना है। इस प्रक्रिया में, यह हमारी कल्पना की सीमाओं को संकुचित कर देता है और अंततः इस बात को भी सीमित कर देता है कि हम किस प्रकार की आशा करने का साहस कर सकते हैं।

आशा के अभाव में, श्रमिक वर्ग को दो प्रकार की राजनीतिक स्थितियों में धकेल दिया जाता है: या तो उसे अति-दक्षिणपंथ के कठोर निराशावाद की ओर धकेल दिया जाता है, जहाँ एक अलग भविष्य की कल्पना का ही उपहास किया जाता है; या फिर वह पलायनवादी पराजयवाद के अधीन हो जाता है, जो यह मान लेता है कि भविष्य पहले ही खो चुका है।

चीनी भाषा में 'भविष्य' की दो अवधारणाएँ यह स्पष्ट करने में मदद करती हैं कि यहाँ क्या दाँव पर लगा है। '未来' (wèilái) शब्द, जिसका अर्थ भविष्य है—या शाब्दिक रूप से 'जो अभी तक आया नहीं

है’—दो भागों से मिलकर बना है: 未 (wèi) का अर्थ है ‘अभी नहीं’ या ‘नहीं हुआ’, और 来 (lái) का अर्थ है ‘आना’ या ‘पहुँचना’। साथ मिलकर, ये भविष्य की मूल विशेषता—उसकी अपूर्णता—पर ज़ोर देते हैं। निराशावाद और आशा के बीच का फ़र्क़ इसी में निहित है: भविष्य पूर्वनिर्धारित नहीं है। यह एक संभावना है, और यहीं मानव क्रिया की भूमिका सामने आती है।
इस संदर्भ में, आशा विचारों और भावनाओं के संघर्ष का मैदान बन जाती है। यही कारण है कि आशा को महज़ एक भावना से कहीं अधिक, एक अभ्यास के रूप में विकसित होना चाहिए – एक ऐसा अभ्यास जो जन शिक्षा और संस्कृति के माध्यम से निर्मित हो, इतिहास में निहित हो, और जिसे हमारे दैनिक जीवन में सक्रिय रूप से जिया जाए।

विचारों की लड़ाई

शासक वर्ग अपने मूल्यों—व्यक्तिवाद, निर्दयता और रूढ़िवाद—को बढ़ावा देकर वर्ग संबंधों और साझा वर्ग हितों को धुँधला करने का काम करता है। वह प्रभुत्वशाली वर्गों के अधीन लोगों को इस तरह प्रशिक्षित करता है कि वे राजनीतिक गतिविधियों को समय की बर्बादी, अव्यावहारिक या काल्पनिक मानकर तुरंत ख़ारिज कर दें, और सामूहिक कार्रवाई को या तो भोलापन या ख़तरनाक समझें। ऐसी परिस्थितियों में, आशा के व्यक्तिगत रूप से उत्पन्न होने की उम्मीद नहीं की जा सकती। इसे एक अभ्यास के रूप में निर्मित करना होगा, जो संभावनाओं के क्षितिज को फिर से खोल सके और पूँजीवादी वर्तमान के रोज़मर्रा की ‘सामान्य समझ’ को चुनौती दे सके।

इसलिए, आशा को ठोस राजनीतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से संगठित करना आवश्यक है, जो संभावनाओं के क्षितिज को फिर से खोलें। इसके लिए हमें:

राजनीतिक कल्पना विकसित करनी होगी- वामपंथी शक्तियों को संगठित श्रम और सामाजिक संबंधों के वैकल्पिक रूपों का निर्माण करके भविष्य को स्पष्ट और समझने योग्य बनाना होगा। भविष्य की आशा को तब संगठित किया जा सकता है जब वह वर्तमान में लोगों की भौतिक परिस्थितियों को बदलने वाली ठोस कार्रवाइयों से जुड़ी हो, और जब श्रमिक वर्ग स्वयं को पूँजीवादी संकटों के दर्शक के बजाय इतिहास के नायक के रूप में पहचान सके।

पढ़ो ताकि सीख सको, और सीखो ताकि कर सको- हो ची मिन्ह ने कहा था, ‘आप हज़ार किताबें पढ़ सकते हैं, लेकिन अगर आप जो पढ़ते हैं उसे लागू नहीं करते, तो आप केवल किताबों की एक अलमारी

हैं।'[25] पढ़ना तब आशा का अभ्यास बनता है जब वह क्रिया से जुड़ता है। अध्ययन सामूहिक होना चाहिए और उन समस्याओं की ओर उन्मुख होना चाहिए जिनका सामना लोग अपने कार्यस्थलों, पड़ोस और संगठनों में करते हैं। उद्देश्य केवल ज्ञान का संचय नहीं है, बल्कि एक साझा भाषा, विश्लेषण और आत्मविश्वास का विकास करना है, जिसे व्यवहार में परखा जा सके।

लोकप्रिय प्रति-संस्कृति का विकास करें- एक प्रति-विचारधारा बिना प्रति-संस्कृति के नहीं बनाई जा सकती। इसका अर्थ है लोकप्रिय सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के ऐसे रूपों का निर्माण करना जो व्यक्तिवाद और निराशावाद के प्रभाव को तोड़ें, गरिमा का निर्माण करें और एकजुटता को आकर्षक बनाएँ, साथ ही श्रमिक वर्ग की संस्कृति का सम्मान करें।

भविष्य की बात लोगों तक पहुँचाएँ- वामपंथ को अपने कार्यक्रम को ऐसे आसान रूप में बदलना चाहिए, जिसे लोग आसानी से समझ सकें। 'शिक्षाप्रद' (didactic) होने का अर्थ लोगों से ऊपर से बात करना नहीं है; इसका अर्थ है रणनीतिक होना और प्रस्तावों को इस तरह स्पष्ट रूप से संप्रेषित करना कि वे लोगों के अनुभवों से जुड़े हों और व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से समझाए जा सकें। उद्देश्य अमूर्तता से आगे बढ़कर दिशा प्रदान करना है, ताकि लोग समझ सकें कि क्या किया जा सकता है, किसके द्वारा, और किन संसाधनों के साथ।[26]

स्रोत की ओर लौटें- क्रांतिकारी इतिहास और संस्कृति और सामान्य रूप से इतिहास और संस्कृति को बचाएँ। इतिहास आशा का एक अभ्यास है क्योंकि यह इस विचार को तोड़ता है कि वर्तमान शाश्वत है। विघटन, सामूहिक संघर्ष और परिवर्तन के क्षणों की ओर लौटकर, लोग इस बात के प्रमाण प्राप्त करते हैं कि बदलाव संभव है और यह भी सीखते हैं कि उसे कैसे हासिल किया गया। इतिहास केवल पुरानी यादों में खोना नहीं है—यह रणनीति, त्याग और आत्मविश्वास का एक विद्यालय है।[27]
स्थायी प्रेरक बनें- वामपंथ को हर सामूहिक मंच पर काम करना चाहिए ताकि मजदूर वर्ग के विचार फैलाए जा सकें।

स्थायी प्रेरक बनें- उसे वहाँ उपस्थित होना चाहिए जहाँ लोग एकत्र होते हैं—एक अतिथि वक्ता के रूप में नहीं, बल्कि एक संगठित करने वाली शक्ति के रूप में। अंतोनियो ग्राम्शी के 'नए बुद्धिजीवी' की अवधारणा एक 'निर्माता' और 'संगठक' की है—एक 'स्थायी प्रेरक', जो कभी-कभार की वाकपटुता के बजाय व्यावहारिक जीवन से जुड़ा होता है।

भावनाओं की लड़ाई

शासक वर्ग को लगातार यह कोशिश करनी पड़ती है कि पूँजीवादी समाज में होने वाले शोषण और अभाव के कारण पैदा होने वाले लोगों के ग़ुस्से और असंतोष को एक अलग दिशा में मोड़ दे। असंतोष तब ख़तरनाक हो जाता है जब वह संगठित हो, जब वह अपने दुश्मन को पहचानता हो, और जब वह एकजुटता के साथ प्रतिक्रिया देता हो। इसलिए इसे लगातार सामूहिक संघर्ष से हटाकर डर, नाराज़गी, निराशा और हार मान लेने की ओर मोड़ दिया जाता है।

आज यह संघर्ष और तीव्र हो गया है, क्योंकि आज का मीडिया और इंटरनेट ऐसा हो गया है कि युवा मज़दूरों को ऑनलाइन प्लैटफ़ॉर्मों में खींच लिया जाता है। यहाँ उनके भीतर व्यक्तिगत सोच (सिर्फ अपने बारे में सोचने) को बढ़ावा मिलता है। उन्हें इसमें फँसाकर पैसा बनाया जाता है। इन माध्यमों का उनकी विवेकबुद्धि पर असर पड़ता है और उनकी चेतना कुंद होती है। इन प्लैटफ़ॉर्मों पर कट्टर दक्षिणपंथी ताक़तों का असर रहता है।

इन स्थानों में असंतोष को भाँपकर क्षणिक भावनात्मक भागीदारी के माध्यम से अस्थायी राहत दी जाती है। परिणाम यह नहीं होता कि असंतोष समाप्त हो जाए, बल्कि उसका (लाभकारी) प्रबंधन होता है—जिससे श्रमिक वर्ग अलग-थलग, विभाजित और मूकदर्शक हो जाता है। वह प्रतिक्रिया को ही राजनीति समझने लगता है।

इस परिदृश्य में, हमें ग़ुस्से और भ्रम को स्पष्टता में, स्पष्टता को आशा में, और आशा को सामूहिक कार्रवाई में बदलना होगा। इसके लिए आवश्यक है:

मीडिया साक्षरता- वामपंथ को श्रमिक वर्ग को आभासी स्थानों और तकनीकों की संरचना, उनके उद्देश्य (इच्छित और अनपेक्षित) और उनकी राजनीतिक अर्थव्यवस्था के बारे में शिक्षित करना होगा। इसका मतलब है प्रबंधित भागीदारी और वास्तविक शक्ति के बीच के अंतर को उजागर करना—पोस्ट करने और संगठित होने के बीच का फ़र्क़ दिखाना—और यह सिखाना कि शासक वर्ग कैसे इन आभासी मंचों पर अपने नियंत्रण के ज़रिए सूचना को नियंत्रित करता है, आक्रोश को बढ़ाता है और अलगाव को सामान्य बनाता है। लक्ष्य इन स्थानों से हटना नहीं है, बल्कि लोगों को उन्हें समझने, उपयोग करने और उनकी सीमाओं को पहचानने के उपकरण देना है।

ज़मीनी राजनीति- आभासी मंचों का उपयोग शिक्षा और लामबंदी के लिए करते हुए भी, वामपंथ को ऐसे अवसर बनाने होंगे जहाँ लोग सीधे तौर पर देख सकें कि वर्तमान को बदलकर बेहतर भविष्य कैसे बनाया जा सकता है। इसके लिए ऐसे संगठित अवसर जरूरी हैं जहाँ एल्गोरिदम की मध्यस्थता के बिना लोग मिल सकें, विचारों का आदान-प्रदान कर सकें, संगठित हो सकें, निर्णय ले सकें, सामूहिक कार्य कर सकें और उसके परिणाम देख सकें। उद्देश्य क्षणिक और सीमित रुचियों पर आधारित संपर्क से आगे बढ़कर साझा वर्ग हितों पर आधारित दीर्घकालिक संगठन बनाना है।

प्रति-मूल्य (काउंटर-वैल्यूज़)- वामपंथ को समाजवादी मूल्यों का विकास करना होगा और उन्हें राजनीतिक कार्रवाई के माध्यम से व्यवहार में लाना होगा। इसका अर्थ है एकजुटता, देखभाल, अनुशासन और भाईबंदी (कॉमरेडशिप) को केवल नारे नहीं, बल्कि वास्तविकता बनाना। मूल्य तब विश्वसनीय बनते हैं जब वे हमारे संगठन के तरीक़ों में दिखाई देते हैं—हम एक-दूसरे के साथ कैसे व्यवहार करते हैं, कैसे मिलकर काम करते हैं, मतभेदों को कैसे सुलझाते हैं, और जिन समुदायों की सेवा का दावा करते हैं, उनसे कैसे संबंध रखते हैं।

ऐसी संस्कृति में, जो निर्दयी व्यक्तिवाद और निराशावाद को बढ़ावा देती है, समाजवादी मूल्यों को व्यवहार में दिखाना स्वयं भावनाओं की लड़ाई में एक रणनीति बन जाता है। यह एक अलग प्रकार के सामाजिक संबंधों की झलक देता है—और इस प्रकार यह स्पष्ट करता है कि अलग मूल्यों पर आधारित भविष्य का समाज कैसा हो सकता है।

आशा एक प्रैक्सिस के रूप में

यदि भविष्य '未来' (wèilái) है—वह 'अभी-नहीं' जो आने वाला है—तो आशा वह संवेदना है जो इस 'अभी-नहीं' को खुला रखती है, और वह अभ्यास है जो इसे निराशावाद, तमाशे और समर्पण द्वारा बंद होने से रोकता है। शासक वर्ग 'wèilái' को एक क़ैदखाने में बदलने, वर्तमान को शाश्वत बनाने और पूँजीवादी असंतोष को निराशावाद या क्रूरता में बदलने का प्रयास करता है। इसके विपरीत, हमारी परंपरा यह कहती है कि आशा कोई निष्क्रिय आशावाद या सिर्फ़ उम्मीद नहीं है, बल्कि यह दुनिया के अधूरे स्वरूप की ओर एक संघर्षशील दृष्टि है—जो वैश्विक दक्षिण में गरिमा के लिए हुए संघर्षों में गढ़ी गई है।

यह इसलिए ख़तरनाक है क्योंकि यह भौतिक है: यह चेतना को ऊँचा उठाती है और लोगों को मात्र सहन करने से कार्रवाई की ओर ले जाती है।

इसी कारण आशा को संरचना, अनुशासन और संगठन की आवश्यकता होती है। जब गतिशील समाज की संस्कृति और विचार पूँजीवादी 'सामान्य समझ' के दोहराव में बाधा डालते हैं, तो वे निर्णायक बन सकते हैं—यह भौतिकवाद का खंडन नहीं, बल्कि उसकी द्वंद्वात्मक पूर्णता है। इस अर्थ में, '大同' (dàtóng)—'सार्वभौमिक समरसता' से युक्त एक आदर्श स्थिति—सिर्फ एक सजावटी कल्पना नहीं, बल्कि एक ऐसा क्षितिज है जो रणनीति को दिशा देता है। वहीं '小康' (xiǎokāng, 'मध्यम समृद्ध समाज') उन ठोस क़दमों को दर्शाता है जो सीमित संसाधनों के भीतर भी गरिमा के साथ विकास को संभव बनाते हैं।

आशा तब वास्तविक बनती है जब वह '将来' (jiānglái, 'भविष्य'), यानी 'जो आने वाला है', को एक वादे से बदलकर एक योजना में परिवर्तित कर देती है। कार्य केवल अमूर्त सपने देखना नहीं है, बल्कि एक ठोस यूटोपिया का निर्माण करना है—जो वास्तविक प्रवृत्तियों में निहित हो और अभ्यास के माध्यम से मज़बूत हो—ताकि 'अभी-नहीं' एक ठोस भविष्य में बदल सके, जिसे वर्तमान में ही निर्मित किया जा रहा हो।

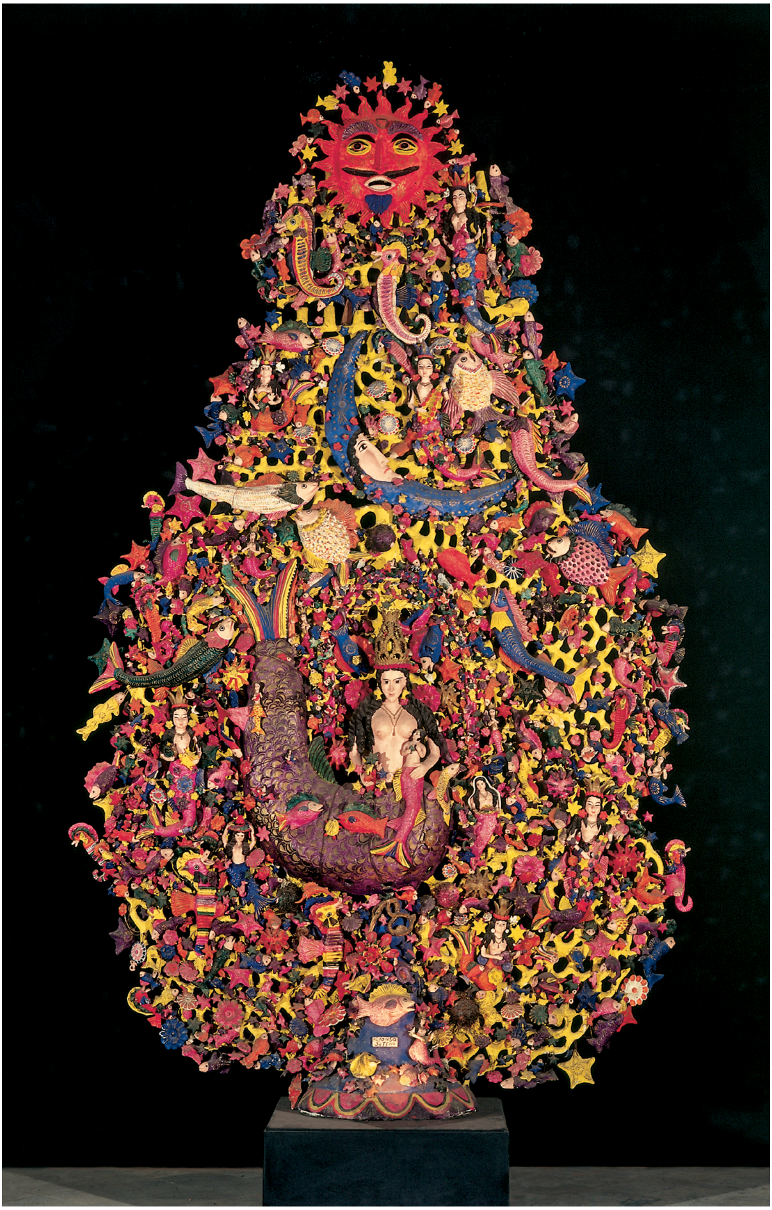

अल्फोंसो सोतेनो फर्नांदेस (मेटेपेक, मेक्सिको राज्य, मेक्सिको), आर्बोल दे ला विदा (जीवन का वृक्ष), 1975, खुली भट्टी में पकाई गई मिट्टी पर वार्निश युक्त विनाइल रंग, 6 मी.

नोट्स

1. Tricontinental: Institute for Social Research, The Anti-Feminist Agenda of the Latin American Far Right, dossier no. 98, 3 March 2026, https://thetricontinental.org/dossier-agenda-right-against-women/; Tricontinental: Institute for Social Research, The War on the Poor: Narcotics, Campesinos,and Capitalism, dossier no. 97, 3 February 2026, https://thetricontinental.org/dossier-war-on-the-poor/; Tricontinental: Institute for Social Research, Imperialism Will Inevitably Be Defeated: The Re-Emergence of the Tricontinental Spirit, dossier no. 95, 9 December 2025, https://thetricontinental.org/dossier-tricontinental-conference-60/; Tricontinental: Institute for Social Research, The Environmental Crisis Is a Capitalist Crisis, dossier no. 93, 14 October 2025, https://thetricontinental.org/dossier-environmental-crisis/; Tricontinental: Institute for Social Research, How the World Looks from Tricontinental, dossier no. 90, 15 July 2025, https://thetricontinental.org/dossier-tricontinental-anniversary-global-south-sovereignty/; Tricontinental: Institute for Social Research, Hyper-Imperialism: A Dangerous Decadent New Stage, Contemporary Dilemmas no. 4, 23 January 2024, https://thetricontinental.org/studies-on-contemporary-dilemmas-4-hyper-imperialism/.

2. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, 'खास किस्म के चरम दक्षिणपंथ पर दस विचार: तैंतीसवाँ न्यूज़लेटर (2024)', 15 अगस्त 2024, https://thetricontinental.org/hi/newsletterissue/hindi-nl33-daxinpanth-pas-das-vichar/.

3. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, सुबह: मार्क्सवाद और राष्ट्रीय मुक्ति, https://thetricontinental.org/hi/dawn_marxvaad_rashtriya_mukti/.

4. Mark Fisher, Capitalist Realism: Is There No Alternative? (Winchester: Zero Books, 2009).

5. Tricontinental: Institute for Social Research, The Environmental Crisis Is a Capitalist Crisis; Tricontinental: Institute for Social Research, Class Struggle and Climate Catastrophe in the Sahel, dossier no. 99, April 2026, https://thetricontinental.org/dossier-class-struggle-climate-sahel/; Tricontinental: Institute for Social Research, Africa's Faustian Bargain with the International Monetary Fund, dossier no. 88, 13 May 2025, https://thetricontinental.org/dossier-faustian-bargain-imf-africa/.

6. Ernst Bloch, The Principle of Hope, Volume 1 (Cambridge: MIT Press, 1986) and The Spirit of Utopia (Palo Alto: Stanford University Press, 2000).

7. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, बांडुंग भावना, डोसियर संख्या 87, 8 अप्रैल 2025, https://thetricontinental.org/hi/bandung-bhawna/; Tricontinental: Institute for Social Research, Imperialism Will Inevitably Be Defeated; Tricontinental: Institute for Social Research, The 80th Anniversary of the Victory in the World Anti-Fascist War, Understanding Who Saved Humanity: A Restorationist History, Contemporary Dilemmas no. 5, 12 November 2025, https://thetricontinental.org/the-80th-anniversary-of-the-victory-in-the-world-anti-fascist-war/.

8. Tricontinental: Institute for Social Research, The False Concept of Populism and the Challenges facing the Left: A Conjunctural Analysis of Politics in the North Atlantic, dossier no. 83, 17 December 2024, https://thetricontinental.org/the-false-concept-of-populism-and-the-challenges-facing-the-left-north-atlantic/.

9. Tricontinental: Institute for Social Research, Imperialist War and Feminist Resistance in the Global South, dossier no. 86, 5 March 2025, https://thetricontinental.org/dossier-imperialist-war-and-feminist-resistance-in-the-global-south/; Tricontinental: Institute for Social Research, The Political Organisation of Brazil's Landless Workers' Movement (MST), dossier no. 75, 16 April 2024, https://thetricontinental.org/dossier-75-landless-workers-movement-brazil/.

10. Tricontinental: Institute for Social Research, 'Ten Theses on the Far Right of a Special Type'.

11. Tricontinental: Institute for Social Research, Serve the People: The Eradication of Extreme Poverty in China, Studies on Socialist Construction no. 1, https://thetricontinental.org/studies-1-socialist-construction/; Tricontinental: Institute for Social Research, The Art of the Revolution will be Internationalist, dossier no. 15, https://thetricontinental.org/the-art-of-the-revolution-will-be-internationalist/.

12. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, 'खास किस्म के चरम दक्षिणपंथ पर दस विचार: तैंतीसवाँ न्यूज़लेटर (2024)', 15 अगस्त 2024.

13. Tricontinental: Institute for Social Research, How Neoliberalism Has Wielded 'Corruption' to Privatise Life in Africa, dossier no. 82, 24 November 2024, https://thetricontinental.org/dossier-how-neoliberalism-has-wielded-corruption-to-privatise-africa/.

14. Tricontinental: Institute for Social Research, Life or Debt: The Stranglehold of Neocolonialism and Africa's Search for Alternatives, dossier no. 63, 9 June 2023, https://thetricontinental.org/pan-africa/dossier-63-african-debt-crisis/.

15. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, वर्ग संघर्ष: बड़ी प्रौद्योगिकी कम्पनियाँ और वर्तमान समय की अन्य चुनौतियाँ, डोसियर संख्या 46, 1 नवंबर 2021, https://thetricontinental.org/hi/varg-sangharsh-badi-pradyogiki-aur-kampniyan/.

16. Tricontinental: Institute for Social Research, The Congolese Fight for Their Own Wealth, dossier no. 77, 25 June 2024, https://thetricontinental.org/dossier-77-the-congolese-fight-for-their-own-wealth/; Tricontinental: Institute for Social Research, The Environmental Crisis Is a Capitalist Crisis.

17. Tricontinental: Institute for Social Research, NATO: The Most Dangerous Organisation on Earth, dossier no. 89, 10 June 2025, https://thetricontinental.org/dossier-nato-the-most-dangerous-organisation/; Tricontinental: Institute for Social Research, Hyper-Imperialism.

18. Karl Marx, Capital: A Critique of Political Economy, Volume 1, trans. Ben Fowkes (London: Penguin Books, 1976).

19. World Bank, 'Labor force, total', World Development Indicators, https://data.worldbank.org/indicator/SL.TLF.TOTL.IN; International Labour Organization, 'Employment in agriculture (% of total employment)', 'Employment in industry (% of total employment)', and 'Employment in services (% of total employment)', ILOSTAT modelled estimates, https://data.worldbank.org/indicator/SL.AGR.EMPL.ZS, https://data.worldbank.org/indicator/SL.IND.EMPL.ZS, and https://data.worldbank.org/indicator/SL.SRV.EMPL.ZS; Datta, Namita; Rong, Chen; Singh, Sunamika; Stinshoff, Clara; Iacob, Nadina; Nigatu, Natnael Simachew; Nxumalo, Mpumelelo; and Klimaviciute, Luka, Working Without Borders: The Promise and Peril of Online Gig Work, International Bank for Reconstruction and Development / The World Bank, 2023, https://openknowledge.worldbank.org/entities/publication/ebc4a7e2-85c6-467b-8713-e2d77e954c6c?utm.

20. Tricontinental: Institute for Social Research, The Anti-Feminist Agenda of the Latin American Far Right.

21. Tricontinental: Institute for Social Research, The New Intellectual, dossier no. 12, 11 February 2019, https://thetricontinental.org/the-new-intellectual/.

22. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, वैश्विक दक्षिण के लिए विकास के एक नए सिद्धांत की खोज, डोसियर संख्या 84, 14 जनवरी 2025, https://thetricontinental.org/hi/vaishvik-dakshin-ke-liye-vikas-ke-naye-siddhant-ki-khoj/.

23. Tricontinental: Institute for Social Research, Imperialism Will Inevitably Be Defeated; ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, बांडुंग भावना.

24. Tricontinental: Institute for Social Research, The Sahel Seeks Sovereignty, dossier no. 91, 12 August 2025, https://thetricontinental.org/dossier-sahel-alliance-sovereignty/.

25. Ho Chi Minh, 'Modifying Working Methods', in Selected Works, vol. 2 (Hanoi: Foreign Languages Publishing House, 1961), 496.

26. ट्राईकॉन्टिनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान, वैश्विक दक्षिण के लिए विकास के एक नए सिद्धांत की खोज.

27. Tricontinental: Institute for Social Research, 'Cabral: A Revolutionary of Double Belonging: The Ninth Pan-Africa Newsletter (2024)', 27 September 2024, https://thetricontinental.org/pan-africa/newsletterissue-cabral-centenary/.

28. Julian Assange, When Google Met Wikileaks (New York: OR Books, 2014) and Franklin Foer, World Without Mind: The Existential Threat of Big Tech (New York: Penguin Press, 2017).

Attribution-NonCommercial 4.0
International (CC BY-NC 4.0)

This publication is issued under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International (CC BY-NC 4.0) license. The human-readable summary of the license is available at https://creativecommons.org/licenses/by-nc/4.0/.

Tricontinental: Institute for Social Research
is an international, movement-driven institution focused on stimulating intellectual debate that serves people's aspirations.
www.thetricontinental.org

Instituto Tricontinental de Investigación Social
es una institución promovida por los movimientos, dedicada a estimular el debate intelectual al servicio de las aspiraciones del pueblo.
www.eltricontinental.org

Instituto Tricontinental de Pesquisa Social
é uma instituição internacional, organizada por movimentos, com foco em estimular o debate intelectual para o serviço das aspirações do povo.
www.otricontinental.org